इकाई 2 भारतीय अर्थव्यवस्था में संवृद्धि और संरचनात्मक परिवर्तन

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 आजादी के समय भारतीय अर्थव्यवस्था की स्थिति

2.3 'संवृद्धि' और 'विकास' में अंतर

- 2.3.1 संवृद्धि का अर्थ
- 2.3.2 संवृद्धि की दर मापने का सूत्र
- 2.3.3 आर्थिक विकास का अर्थ

2.4 आर्थिक संवृद्धि की माप

- 2.4.1 वर्तमान कीमत और स्थिर कीमत आंकलनों में अंतर

2.5 भारत में राष्ट्रीय आय में वृद्धि दर और अन्य देशों के साथ तुलना

- 2.5.1 भारत में संवृद्धि दर
- 2.5.2 अन्य देशों के साथ तुलना

2.6 आर्थिक संवृद्धि के कारक

- 2.6.1 आर्थिक कारक
- 2.6.2 आर्थिकेतर कारक
- 2.6.3 हाल में नीति परिवर्तन

2.7 संरचनात्मक परिवर्तन

- 2.7.1 संरचनात्मक परिवर्तन का अर्थ
- 2.7.2 वस्तु बनाम सेवा क्षेत्रक
- 2.7.3 प्रमुख क्षेत्रकों में संरचनात्मक परिवर्तन
- 2.7.4 सकल घरेलू उत्पाद के अन्य संघटक
- 2.7.5 क्षेत्रकों में रोज़गार
- 2.7.6 अंतर्राष्ट्रीय तुलनाएँ

2.8 सारांश

2.9 शब्दावली

2.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें

2.11 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा दिशा संकेत

2.0 उद्देश्य

इस पाठ में हम पिछले लगभग 50 वर्षों में भारत में हुई आर्थिक संवृद्धि और संरचनात्मक परिवर्तनों के संबंध में विचार करेंगे। इस विषय पर चर्चा करने के पूर्व आज़ादी के समय अर्थव्यवस्था की स्थिति के संबंध में विचार किया जाएगा। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप इस स्थिति में हो जायेंगे कि :

- 'आर्थिक संवृद्धि' के अर्थ की व्याख्या कर सकेंगे;
- आर्थिक 'संवृद्धि' और 'विकास' के बीच भेद स्पष्ट कर सकेंगे;

- राष्ट्रीय और प्रति व्यक्ति आय की वृद्धि दरों का विश्लेषण कर सकेंगे;
- आर्थिक संवृद्धि से संबद्ध कारकों का वर्णन कर सकेंगे; तथा
- भारतीय अर्थव्यवस्था में हुए संरचनात्मक परिवर्तनों का परीक्षण कर सकेंगे।

2.1 प्रस्तावना

भारत में अंग्रेजों के शासन के अंतर्गत भारतीय कृषि क्षेत्रक बहुत पिछड़ा हुआ था तथा उद्योग-क्षेत्रक अविकसित था। आज़ादी के बाद 1950-51 में प्रति व्यक्ति आय बहुत कम थी। जन्म दर और मृत्यु दर दोनों काफी ज्यादा थे। मेडिकल सुविधाओं की कमी और गरीबी के कारण पोषाहार भोजन का स्तर भी निम्न था।

उस समय भारतीय अर्थव्यवस्था एक गरीब एवं कृषि पर आधारित अर्थव्यवस्था थी। औद्योगिक विकास का स्तर बहुत नीचा था। जो भी थोड़ा बहुत औद्योगिक विकास हुआ वो एक तरफा था। औद्योगिक प्रतिदर्श निम्न पूँजी-प्रखरता (Intensity) वाला था। किसी देश के आर्थिक विकास के लिए मजबूत आधारिक संरचना (Infrastucture) जैसे कि बैंकिंग, बीमा, यातायात, इत्यादि की जरूरत होती है। आजादी के समय यह सब सुविधाओं की भारत में कमी थी और इन सब सुविधाओं का विकास बढ़ती हुई कृषि और औद्योगिक उत्पादन की पहली जरूरत होता है। आज़ादी के बाद, 50 साल के आयोजन में भारतीय अर्थव्यवस्था के ढांचों में काफी परिवर्तन आए हैं। राष्ट्रीय आय की रचना में संरचनात्मक परिवर्तन, आर्थिक संवृद्धि का एक परिणाम है। जबकि संरचनात्मक परिवर्तन धीमी गति से हो रहा है।

2.2 आजादी के समय भारतीय अर्थव्यवस्था की स्थिति

भारत में अंग्रेजों के शासन का मुख्य प्रयोजन था भारतीय अर्थव्यवस्था का उपयोग सस्ते कच्चे माल के स्रोत के रूप में करना तथा अपने उद्योगों में विनिर्मित माल को भारत के बाज़ारों में बेचना। इसीलिए ब्रिटिश शासकों ने भारतीय अर्थव्यवस्था को विकसित करने का प्रयास नहीं किया। इसका परिणाम यह हुआ कि भारत का कृषि क्षेत्रक पिछड़ा रह गया तथा उद्योग-क्षेत्रक भी अविकसित बना रहा।

1950-51 में तत्कालीन कीमतों पर भारत में प्रतिव्यक्ति आय केवल 240 रु0 थी। निरक्षरता बहुत अधिक थी। प्रथम पंचवर्षीय योजना के शुरू होने के ठीक पहले आबादी के 17 प्रतिशत से भी कम लोग साक्षर थे।

चिकित्सा-सुविधाओं के अभाव एवं अत्यधिक गरीबी के फलस्वरूप पोषक आहार के स्तर के नीचा होने के कारण मृत्यु-दर एवं जन्म-दर दोनों ही बहुत अधिक थीं। 1941-51 के बीच जन्म दर 3.99 प्रतिशत से अधिक थी और मृत्यु-दर 2.74 प्रतिशत थी। इस प्रकार आबादी में सहज वृद्धि-दर प्रतिवर्ष लगभग 1.25 प्रतिशत थी।

आज़ादी के समय भारत की अर्थव्यवस्था अभावग्रस्त कृषि पर आधारित थी। आबादी का 75 प्रतिशत कृषि क्षेत्रक में कार्यरत था। इसकें बावजूद भी भारत खाद्यान्नों के उत्पादन के संबंध में स्वावलंबी नहीं था। कृषि क्षेत्रक सिंचाई के लिए पूर्णत: वर्षा पर आधारित था। मानसून या सरदी के समय जब वर्षा नहीं होती थी तब देश में सूखा की स्थिति हो जाती थी।

भारत के उद्योगों का भी विकास नहीं हो पाया। उद्योगों के कार्यकलाप का स्तर बहुत नीचा था। उद्योगों का बहुत बड़ा भाग कुछ नगरों तक ही केंद्रित था। उदाहरणार्थ, औद्योगिक विकास बंबई और कलकत्ता के इर्द-गिर्द ही हुआ। ये बागानों के स्थान थे (कलकत्ता के आस-पास चाय के बागान और सूती वस्त्र बंबई के आस-पास)। यदि किसी देश में प्रति व्यक्ति आय बहुत ही कम होती है तो इसके फलस्वरूप वहाँ दरिद्रता का दुश्चक्र (Vicious circle of poverty) उत्पन्न होता है, अर्थात् बचत की निम्नदर, निवेश की निम्न दर, कम उत्पादन और प्रतिव्यक्ति कम आय। आज़ादी के समय भारत में यही स्थिति थी। इसके फलस्वरूप पूँजी निर्माण (निवेश) का स्तर बहुत ही नीचा रहा। इसी लिए उद्योग में गतिरोध (stagnation) की स्थिति रही।

जितना भी औद्योगिक विकास हुआ वह असंतुलित था। पूँजीगत उद्योग अविकसित था। विनिर्माण उद्योगों में जो उत्पादन होता था उसमें उत्पादक वस्तु उद्योगों की अपेक्षा उपभोक्ता वस्तु उद्योगों की प्रधानता थी। 1950 में उपभोक्ता वस्तुओं और उत्पादक वस्तुओं के बीच का अनुपात 62:38 था।

अंतत: भारत में औद्योगिक स्वरूप इस प्रकार का था कि उसमें पूँजी की सघनता कम थी। पूँजी की कम सघनता केवल बेकरी, वस्त्र, चीनी आदि उपभोक्ता उद्योगों में ही नहीं बल्कि लोहा और इस्पात जैसे पूँजीगत उद्योगों में भी प्रतिलक्षित होती थी।

किसी देश के आर्थिक विकास के लिए बैंकिंग, बीमा, परिवहन, संचार, बिजली आदि जैसी सशक्त आधारिक संरचना की आवश्यकता होती है। आज़ादी के समय इन सुविधाओं का अभाव था।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि भारत में पंचवर्षीय योजनाओं को शुरू करने के पहले अर्थव्यवस्था की यह स्थिति थी। गरीबी को दूर करने के लिए सबसे पहली प्राथमिकता कृषि और उद्योग का विकास करना था, जिनके लिए परिवहन, संचार, बैंकिंग और व्यापार जैसी आधारिक संरचनाओं को भी विकसित करना आवश्यक था। कृषि का तेज़ी से विकास करना आवश्यक था क्योंकि इससे एक ओर तो उद्योग के लिए कच्चा माल प्राप्त होता है और दूसरी ओर देश की आबादी के लिए खाद्यान्न मिलता है। इसी प्रकार औद्योगिक संवृद्धि से अर्थव्यवस्था की संवृद्धि को बल मिलता है तथा संवृद्धि प्रक्रिया सतत जारी रहती है। ये सभी प्रतिव्यक्ति आय को बढ़ाने में सहायक होते हैं। औद्योगिक विकास के लिए छोटे पैमाने के उद्योगों और भारी उद्योगों दोनों ही का विकास करना आवश्यक था। दीर्घकाल में भारी उद्योग पूँजीगत माल का निर्माण करते हैं और अधिक औद्योगीकरण में सहायक होते हैं। इस प्रकार दोनों के विकास के बीच संतुलन रखना आवश्यक होता है।

कृषि और उद्योग के साथ-साथ परिवहन, बिजली, बैंकिंग, संचार एवं आधुनिक अर्थव्यवस्था के अन्य क्षेत्रकों का विकास करना आवश्यक था। अर्थव्यवस्था के विकास के लिए संतुलित दृष्टिकोण की आवश्यकता को देखते हुए भारत में योजनाबद्ध अर्थव्यवस्था को अपनाया और 1951 में प्रथम पंचवर्षीय योजना की शुरुआत की गई।

बोध प्रश्न 1

1) 1950-51 में भारत में प्रतिव्यक्ति आय केवल ..... रु. थी

2) 1950-51 में जन्म-दर और मृत्य-दर दोनों ही ..... के कारण ऊँची थी।

3) एक वाक्य में बताइए कि गरीबी का दुश्चक्र क्या है?

.....

.....

.....

.....

4) किसी देश के आर्थिक विकास के लिए सशक्त ..... की आवश्यकता होती है।

2.3 'संवृद्धि' और 'विकास' में अंतर

2.3.1 संवृद्धि का अर्थ

'संवृद्धि' शब्द का उपयोग आर्थिक प्रगति की मात्रात्मक अभिव्यक्ति के लिए किया जाता है। इसका अर्थ है कि हम सकल या निवल राष्ट्रीय उत्पाद (GNP या NNP) के संबंध में विचार कर रहे हैं और यह देखते हैं कि यह एक के बाद दूसरे वर्ष तक किस दर से घटती या बढ़ती है। निवल राष्ट्रीय उत्पाद को राष्ट्रीय आय भी कहा जाता है। जब हम कुल राष्ट्रीय उत्पाद (राष्ट्रीय आय) को जनसंख्या से विभाजित करते हैं तब प्रतिव्यक्ति आय प्राप्त होती है। आर्थिक संवृद्धि के छात्र के रूप में हमारी रुचि किसी देश में प्रतिव्यक्ति आय में परिवर्तन या वृद्धि की दरों की गणना करने में भी रहती है। इस प्रकार राष्ट्रीय उत्पाद में या प्रतिव्यक्ति आय में वृद्धि दर मात्रात्मक शब्द है। उदाहरणार्थ, जब हम कहते हैं कि 2000-2001 में भारत के राष्ट्रीय

उत्पाद में वृद्धि 6 प्रतिशत की दर से हुई या प्रतिव्यक्ति आय (per capita income) में 4 प्रतिशत की दर से वृद्धि हुई तब हमारा अभिप्राय होता है कि 2000-2001 में राष्ट्रीय उत्पाद 1999-2000 के राष्ट्रीय उत्पाद से 6 प्रतिशत अधिक था।

2.3.2 संवृद्धि की दर को मापने का सूत्र

संवृद्धि की दर की गणना के लिए अर्थशास्त्री जिस सूत्र का प्रयोग करते हैं, वह सरल है। यदि एक ही वर्ष की संवृद्धि दर की गणना करनी है, अर्थात् 1999-2000 पर 2000-2001 की, तब निम्नलिखित सूत्र का प्रयोग किया जाता है

$$\text{संवृद्धि दर (g.r.)} = \frac{\text{2000-2001 में राष्ट्रीय आय (NP)}}{\text{1999-2000 में राष्ट्रीय आय (NP)}} - 1 \times 100$$

यहाँ पर g.r. से अभिप्राय संवृद्धि दर से होता है और NP से अभिप्राय राष्ट्रीय उत्पाद से होता है। चूँकि संवृद्धि दर की अभिव्यक्ति आमतौर पर प्रतिशत रूप में की जाती है अत: अंश को 100 से गुणा कर दिया जाता है।

परंतु संवृद्धि दर की गणना जब काल श्रेणियों के लिए की जाती है, अर्थात् 5 वर्ष, 10 वर्ष, 15 वर्ष या उससे अधिक, तब चक्रवृद्धि ब्याज के समान एक अन्य सूत्र का प्रयोग किया जाता है। वह सूत्र नीचे दिया जा रहा है संवृद्धि दर और चक्रवृद्धि ब्याज दर की गणना करने का सूत्र एक ही समान है। अत: जो छात्र चक्रवृद्धि ब्याज दर की गणना करने का सूत्र जानते हैं वे इसे छोड़ सकते हैं।

एक से अधिक वर्ष की संवृद्धि दर की गणना करने का सूत्र निम्नलिखित है :

हमारे पास है

$$Y(t) = Y(o)(1+r)^n$$

जिससे हम प्राप्त करते हैं

$$\text{Log } Y(t) = \log Y(o) + n \log (1+r)$$

$$\text{या } \log (1+r) = \frac{\log Y(t) - \log Y(o)}{n}$$

इसलिए

$$\text{या } r = (\text{anti} - \log \frac{\log Y(t) - \log Y(o)}{n} - 1) \times 100$$

लेकिन वास्तविक गणना इस प्रकार की जाती है

$$g.r = (\text{anti} - \log \frac{\log Y(t) - \log Y(o)}{n} - 1) \times 100$$

g.r. की गणना करने के चरण इस प्रकार हैं :

- अंतिम वर्ष की संख्या को लें
- इसे आधार वर्ष की संख्या से विभाजित करें
- गुणांक का लघुगणक लें
- वर्षों की संख्या से विभाजित करें
- इसका प्रतिलघुगणक लें
- एक घटा दें और शेष को 100 से गुणा करें

उदाहरणार्थ, निम्नलिखित वर्षों में GDP इस प्रकार है

1980-81 = 122, 427 (करोड़ रु0 में)

1990-91 = 212, 253 (करोड़ रु0 में)

10 वर्षों (1990-91 — 1980-81) के g.r. की गणना निम्नलिखित प्रकार से की जाती है:

1) 212, 253/ 122, 427 का अनुपात लें जो 1.73371 है

2) अनुपात (अर्थात् 1.73371) का लॉग लें। यह है 0.23898

3) वर्षों की संख्या से विभाजित करें यानि कि 10 से। यह है = 0.023898

4) इसका प्रतिलघुगणक लें = 1.05657

5) घटाएँ 1.05657–1 = 0.05657

6) 100 से गुणा करें = 5.66

अवधि 1980-81 से 1990-91 के दौरान यह प्रतिवर्ष प्रतिशत चक्रवृद्धि संवृद्धि दर है 5.66।

2.3.3 आर्थिक विकास का अर्थ

'आर्थिक विकास' की कोई भी परिभाषा पूर्णत: संतोषजनक नहीं है। फिर भी संक्षिप्त उत्तर निम्नलिखित हो सकता है : आर्थिक विकास वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा किसी अर्थव्यवस्था का अंतरण आर्थिक प्रक्रिया के निम्नस्तर से प्रक्रिया के उच्च स्तर तक होता है। विकास 'प्रक्रिया' का अर्थ होता है कुछ शक्तियों का कार्यशील होना। ये शक्तियाँ एक अवधि तक कार्य करती हैं और इससे कुछ चरों में परिवर्तन होता है। इस प्रक्रिया का सामान्य परिणाम होता है अर्थव्यवस्था के राष्ट्रीय उत्पाद में संवृद्धि।

जब हम राष्ट्रीय आय की केवल संवृद्धि पर ही जोर देते हैं तब विकास प्रक्रिया के मूल परिणाम के संबंध में विचार करते हैं। परंतु यदि हम प्रक्रिया का अधिक विस्तार रूप से परीक्षण करें, तो देखेंगे कि उत्पादन में वृद्धि के साथ-साथ अनेक अन्य परिवर्तन भी होते हैं। इनका वर्गीकरण हम मूल 'कारक पूर्तियों' में परिवर्तन और 'उत्पादों की माँग की संरचना' में परिवर्तनों के रूप में कर सकते हैं। कारक पूर्तियों में परिवर्तन से अभिप्राय हैं:

(i) अतिरिक्त संसाधनों की खोज, (ii) पूंजी संचयन, (iii) जनसंख्या वृद्धि, (iv) उत्पादन की नई और अच्छी तकनीकों को काम में लाना, (v) कौशल में सुधार, और (vi) अन्य संस्थागत और संगठनात्मक परिवर्तन।

उत्पादों की मांग की संरचना में विशेष परिवर्तन के साथ निम्नलिखित में भी परिवर्तन होता है :

(i) जनसंख्या का आकार और आयु संघटन, (ii) आय का स्तर और उसका वितरण, (iii) रुचि तथा (iv) अन्य संस्थागत एवं संगठनात्मक व्यवस्थाएँ।

उपर्युक्त को ध्यान में रखते हुए आर्थिक विकास की व्याख्या 'कारक पूर्तियों' और 'उत्पाद माँग' में विशेष परिवर्तन के रूप में की जा सकती हैं। 'संवृद्धि' का अर्थ होता है उस आर्थिक विकास का मात्रात्मक मूल्यांकन जिसकी माप राष्ट्रीय उत्पाद के रूप में की जाती है, जबकि 'विकास' की संकल्पना का स्वरूप गुणात्मक होता है। इसके अंतर्गत प्रतिव्यक्ति आय में वृद्धि जैसे मात्रात्मक परिवर्तन तो आते ही हैं, उसके साथ ही साथ अर्थव्यवस्था में हुए वे परिवर्तन भी आते हैं जिनकी मात्रा का अंदाज नहीं लगाया जा सकता, जैसे कि जनसंख्या के स्वास्थ्य के स्तर में विकास, निम्न स्तर की वस्तुओं की माँग के स्थान पर उच्च स्तर की वस्तुओं की माँग होने लगना, शिक्षा का प्रसार, आदि। विकास की संकल्पना का क्षेत्र संवृद्धि की संकल्पना के क्षेत्र की तुलना में अधिक व्यापक होता है। वास्तव में संवृद्धि को किसी अर्थव्यवस्था के विकास समूह का एक उप-समूह माना जा सकता है।

इसलिए, छात्रों के लिए आवश्यक होता है कि वे इन शब्दों को भलीभाँति समझ लें। जो लोग इन दोनों शब्दों के बीच के संकल्पनात्मक अंतर को नहीं जानते वे इनमें से एक के स्थान पर दूसरे का प्रयोग कर जाते हैं। परंतु अर्थशास्त्र का छात्र होने के नाते आपके लिए आवश्यक है कि आप इन शब्दों को अलग-अलग रखें।

बोध प्रश्न 2

1) संवृद्धि दर शब्द की व्याख्या कीजिए। किसी अर्थव्यवस्था में संवृद्धि दर को मापने के सूत्र बताइए।

.....

.....

.....

.....

2) 'संवृद्धि' और 'विकास' शब्दों में अंतर दिखाइए।

.....

.....

.....

.....

3) किसी अर्थव्यवस्था के 'विकास' से क्या अभिप्राय है? इस पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

.....

.....

.....

.....

2.4 आर्थिक संवृद्धि की माप

आर्थिक 'संवृद्धि' की माप सामान्यत: चार प्रकार से की जा सकती है :

वास्तविक राष्ट्रीय आय में वृद्धि : आर्थिक संवृद्धि की मापों में से एक है एक निश्चित अवधि के दौरान किसी अर्थव्यवस्था के वास्तविक राष्ट्रीय उत्पाद या आय में वृद्धि। लेकिन यह संतोषजनक माप नहीं है क्योंकि इसमें इसी अवधि में जनसंख्या में हुई वृद्धि पर ध्यान नहीं दिया जाता।

प्रतिव्यक्ति आय में वृद्धि : आर्थिक संवृद्धि की दूसरी माप है प्रतिव्यक्ति वास्तविक आय में वृद्धि। इससे अभिप्राय यह है कि वास्तविक राष्ट्रीय आय में वृद्धि की दर जनसंख्या में वृद्धि की दर से अधिक होनी चाहिए। लेकिन प्रतिव्यक्ति आय में वृद्धि के फलस्वरूप आम व्यक्ति का वास्तविक जीवन स्तर उंचा नहीं भी उठ सकता है। यह संभव है कि जब प्रतिव्यक्ति वास्तविक आय बढ़ रही हो तब प्रतिव्यक्ति उपभोग कम हो जाए। ऐसा तब संभव होता है जब आय में हुई वृद्धि गरीब लोगों को हाथों में न जाकर कुछ थोड़े से धनी लोगों के हाथों में जाए। ऐसी स्थिति में यह विधि भी दोषपूर्ण हो जाती है।

उपभोग में वृद्धि : आर्थिक संवृद्धि की माप आर्थिक कल्याण की दृष्टि से भी की जा सकती है। यह वह प्रक्रिया होती है जिसमें व्यक्तिओं द्वारा वस्तुओं और सेवाओं के उपभोग में वृद्धि होती है। लेकिन यह विधि भी दोषों से मुक्त नहीं है। पहली बात यह है कि वस्तुओं और सेवाओं का उपभोग व्यक्तिओं की रुचियों और पसंदों पर निर्भर करता है। दूसरी बात है कि आर्थिक कल्याण की माप के लिए केवल यही विचार नहीं करना होता कि किस वस्तु का उत्पादन हो रहा है, बल्कि यह भी देखना होता है कि किस प्रकार से उत्पादन हो रहा है। यह भी हो सकता है कि उत्पादन में वृद्धि के फलस्वरूप अर्थव्यवस्था में वास्तविक लागतें और सामाजिक लागतें बढ़ गई हों।

सामाजिक संकेतक : अर्थशास्त्री गण आर्थिक संवृद्धि की माप सामाजिक संकेतकों के रूप में भी करते हैं। ये संकेतक विकास प्रक्रिया की गुणवत्ता पर जोर देते हैं। इसके अंतर्गत निम्नलिखित प्रमुख हैं : स्वास्थ्य, भोजन और पोषण, शिक्षा, रोज़गार, आवास, वस्त्र, परिवहन, सामाजिक सुरक्षा, आदि। लेकिन इस संबंध में समस्या यह होती है कि ऐसे सूचक में कितनी वस्तुओं को शामिल किया जाए।

अब प्रश्न यह उठता है कि आर्थिक संवृद्धि की वास्तविक माप क्या होनी चाहिए? सभी मापों के अपने-अपने सापेक्ष गुण और दोष होते हैं। लेकिन मुख्य चुनाव 'राष्ट्रीय आय' और 'प्रतिव्यक्ति आय' में से करना होता है। हमारा मत तो यह है कि विकसित देशों में राष्ट्रीय आय में वृद्धि को आर्थिक संवृद्धि का सूचक मानना चाहिए, जबकि विकासोन्मुख देशों में वास्तविक प्रतिव्यक्ति आय में वृद्धि को आर्थिक संवृद्धि का सूचक मानना चाहिए। परंतु अधिकतर अर्थशास्त्री प्रतिव्यक्ति आय को आर्थिक संवृद्धि का संकेतक मानना उपयुक्त समझते हैं।

2.4.1 वर्तमान कीमत और स्थिर कीमत आकलनों में अंतर

आगे विचार करने के पूर्व छात्रों के लिए आवश्यक है कि वे वर्तमान कीमतों के आकलन और स्थिर कीमतों के आकलन का अर्थ समझ लें।

वर्तमान कीमत आकलनों को तैयार करने की विधि है उत्पादित माल की मात्रा को उसे वर्तमान कीमतों से गुणा करना। इसका अर्थ हैं कि यदि 1999-2000 एक साइकिल की कीमत, 1,000 रु. हैं तो वर्तमान कीमत पर कुल उत्पादन 10 लाख रुपये का है।

अब विचार करें कि आकलन 1980-81 कीमतों पर करना है। इस स्थिति में हम 1999-2000 में उत्पादित 1,000 साइकिलों को लेंगे और उन्हें 1980-81 की कीमतों से गुणा करेंगे। मान लीजिए कि 1980-81 कीमतों पर एक साइकिल की कीमत 800 रु. थी। उस स्थिति में 1980-81 कीमतों पर 1999-2000 में उत्पादन 8,00,000 रु. होगा।

छात्रों को याद रखना चाहिए कि राष्ट्रीय आय की माप मुद्रा मूल्यों में की जाती है। इसके अंतर्गत अर्थव्यवस्था में उत्पादित कोयला, वस्त्र, रसायन, कासमेटिक, कागज आदि अनेक प्रकार की वस्तुएँ और सेवाएँ आ जाती हैं। इन वस्तुओं और सेवाओं को एक साथ जोड़ा नहीं जा सकता। उदाहरणार्थ, साइकिलों के उत्पादन को पुस्तकों के उत्पादन के साथ जोड़ा नहीं जा सकता, हालाँकि दोनों ही राष्ट्रीय उत्पाद के अंश हैं। लेकिन उनके मुद्रा मूल्य को आसानी से जोड़ा जा सकता है।

लेकिन उत्पादन के मूल्य का उपयोग जब दो अवधियों, जैसे 1980-81 और 1999-2000, में संवृद्धि दर की माप के लिए किया जाता है तब एक समस्या उत्पन्न होती है। इन दो वर्षों में वस्तुओं और सेवाओं के मूल्य एक समान नहीं होते। उपर्युक्त उदाहरण में साइकिलों की कीमतें दोनों वर्षों में एक जैसी नहीं है। 1999-2000 में 1,000 साइकिलों के उत्पादन का कुल मूल्य 10,00,000 रु. है तथा 1980-81 में उतनी ही साइकिलों का 8,00,000 रु. है। साइकिलों को उत्पादन के मूल्य का अनुपात बताता है कि 1980-81 की तुलना में 1999.2000 में साइकिलों का उत्पादन 1.25 गुना अधिक है। क्या यह सही है? सच्चाई तो यह है कि केवल साइकिलों की कीमत में 1.25 गुनी वृद्धि हुई है। उत्पादन में कोई भी वृद्धि नहीं हुई। वह 1,000 साइकिलें हैं। यदि इन दोनों वर्षों के उत्पादन का मूल्य समान कीमतों पर लगाया जाए तो स्थिति स्पष्ट हो जाएगी। यह मूल्यांकन स्थिर कीमतों पर लगाया जाता है अर्थात् स्थिर या आधार वर्ष के आधार पर। दूसरे शब्दों में, मूल्यांकन उस वर्ष की कीमतों के आधार पर किया जाता है जिसमें उत्पादन होता है। ऐसी स्थिति में तुलना के अंतर्गत कीमतों में परिवर्तन का प्रभाव आ जाता है।

इस अंतर को ध्यान में रखना चाहिए क्योंकि अर्थव्यवस्था में वास्तविक संवृद्धि को सदा स्थिर कीमतों पर लिया जाता है। वर्तमान कीमत संवृद्धि के अंतर्गत कीमतों में वृद्धि भी आ जाती है अत: इसमें किसी अर्थव्यवस्था की वास्तविक संवृद्धि परिलक्षित नहीं होती। नीचे हम स्थिर कीमतों (1980-81) पर संवृद्धि का विश्लेषण करेंगे।

अर्थव्यवस्था की आवश्यकताओं में परिवर्तन को साथ-साथ सी.एस.ओ. समय-समय पर आधार वर्ष में परिवर्तन करता रहता है। प्रारंभ में 1952-53 कीमतों का प्रयोग स्थिर कीमतों के रूप में हुआ। उसके बाद वर्ष 1960-61, 1970-71, 1980-81 और 1993-94 का प्रयोग स्थिर कीमत आधार के रूप में हुआ। 1985.86 तक सी.एस.ओ. ने 1970-71 स्थिर कीमतों पर राष्ट्रीय आय प्राक्कलनों को तैयार किया। लेकिन

1988 में सी.एस.ओ. ने 1980-81 को आधार वर्ष लिया तथा अब वर्ष 2000 में 1993-94 को आधार वर्ष माना गया है। इस नई श्रेणी में 1950-51 से लेकर अब तक की समस्त अवधि के लिए राष्ट्रीय उत्पाद का प्राक्कलन तैयार किया गया है।

बोध प्रश्न 3

1) आर्थिक संवृद्धि की माप की चार विधियाँ कौन-कौन सी हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

2) संवृद्धि की माप के लिए वर्तमान कीमतों और स्थिर कीमतों में अंतर को स्पष्ट कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2.5 भारत में राष्ट्रीय आय की संवृद्धि दर और उसका अन्य देशों के साथ तुलना

2.5.1 भारत में संवृद्धि दर

अब हम भारत में राष्ट्रीय आय और प्रतिव्यक्ति आय में वृद्धि दर की प्रवृत्तियों के संबंध में अध्ययन करेंगे।

केंद्रीय सांख्यिकीय संगठन (CSO) एक सरकारी संगठन है और यह भारत की राष्ट्रीय आय और प्रतिव्यक्ति आय के वार्षिक प्राक्कलन को तैयार करता है। इन प्राक्कलनों को यह 'नेशनल एकाउंट स्टैटिस्टिक्स' में प्रकाशित करता है। सी.एस.ओ. इनका प्राक्कलन वर्तमान कीमतों और स्थिर कीमतों दोनों ही पर करता है। स्थिर कीमतों पर प्राक्कलन एक निश्चित अवधि के दौरान राष्ट्रीय आय में वृद्धि का सही चित्र प्रस्तुत करता है।

तालिका-1 में आर्थिक कार्यकलापों के द्वारा 1980-81 कीमतों पर सकल देशीय उत्पाद की वृद्धि दर को दिखाया गया है। इसमें दिखाया गया है कि भारत के योजनाबद्ध विकास के प्रथम तीन दशकों में संवृद्धि की दर बहुत नीची थी। 1970 के दशक में वार्षिक संवृद्धि दर 3.9 प्रतिशत थी। 1980 और 1990 के दशकों में बहुत अधिक प्रगति हुई है। 1980 के दशक में संवृद्धि दर 5.6 प्रतिशत थी और 1990 के दशक के प्रथम आधे भाग में 5.3 प्रतिशत थी। साढ़े चार दशकों में तुलना करने पर हम पाते हैं कि सकल देशीय उत्पाद (GDP) 1970 के दशक में सबसे कम था तथा 1990 के दशक में सबसे अधिक था। प्रथम तीन दशकों में वार्षिक संवृद्धि दर 3.4 प्रतिशत तक सीमित रही जब कि पिछले डेढ़ दशकों में यह बढ़कर 5.5 प्रतिशत हो गई, जो डेढ़ गुनी से अधिक वृद्धि थी। ऐसा लगता है कि संवृद्धि दर में यह वृद्धि मछली पकड़ना, खनन, उत्खलन, विनिर्माण, बैंकिंग, बीमा, लोक प्रशासन और रक्षा जैसे अनेक गैर-कृषि क्षेत्रकों में काफी प्रगति के कारण हुई है।

तालिका-1
1980-81 कीमतों पर राष्ट्रीय उत्पाद में संवृद्धि दर
(प्रतिशत प्रतिवर्ष)

क्षेत्रक	1950-51 से 1960-61 तक	1960-61 से 1970-71 तक	1970-71 से 1980-81 तक	1980-81 से 1990-91 तक	1990-91 से 1998-99 तक
I. प्राथमिक क्षेत्रक	3.0	2.3	1.5	3.6	2.5
1. कृषि	3.3	2.2	1.7	3.9	2.4
2. वानिकी	0.3	3.0	(-) 0.9	(-) 1.0	(-) 1.7
3. मछली पकड़ना	5.5	3.5	2.8	5.7	7.8
4. खनन और उत्खनन	5.6	3.9	4.9	6.7	4.4
II. द्वितीयक क्षेत्रक	6.2	5.4	4.0	6.7	6.2
5. विनिर्माण	6.0	5.2	4.0	7.2	6.4
6. निर्माण	6.3	5.5	3.0	3.6	3.8
7. बिजली, गैस और आपूर्ति	10.3	11.1	6.8	9.0	8.5
III. तृतीयक क्षेत्रक या सेवा क्षेत्रक	4.1	4.6	4.3	6.6	6.8
8. परिवहन, संचार और व्यापार	5.3	5.0	4.7	6.4	7.8
9. बैंकिंग, बीमा और स्थावर संपत्ति	3.0	3.4	4.0	7.2	7.3
10. लोक प्रशसन और रक्षा	3.1	3.9	3.0	5.5	3.6
11. अन्य सेवाएँ सकल देशीय उत्पाद	3.1	3.9	3.0	5.5	5.5
	3.9	3.7	3.1	5.7	5.3

1980-81 कीमतों पर प्रतिव्यक्ति आय को और उसके संवृद्धि दरों की नीचे तालिका-2 में दिखाया जा रहा है।

तालिका-2
1980-81 कीमतों पर प्रतिव्यक्ति आय और संवृद्धि दर वर्ष

	प्रतिव्यक्ति आय (रु0)	संवृद्धि दर (प्रतिशत प्रतिवर्ष)
1950-51	1,127	—
1960-61	1,350	1.8
1970-71	1,520	1.2
1980-81	1,630	0.7
1990-91	2,222	3.1
1995-96	2,454	2.2
1998-99*	9,738	5.0

* नई शृंखला : आधार वर्ष . 1993-94.

स्रोत : आर्थिक सर्वेक्षण, 1999-2000, भारत सरकार, वित्त मंत्रालय के आँकड़ों पर आधारित।

इन आँकड़ों से स्पष्ट है कि प्रतिव्यक्ति आय में वृद्धि 1990 के दशक में सबसे अधिक थी और 1970 के दशक में सबसे कम थी।

2.5.2 अन्य देशों के साथ तुलना

अन्य देशों के साथ तुलना के लिए 1980 से 1994 के बीच की अवधि को लिया गया है। अंतर्राष्ट्रीय तुलना के लिए सकल घरेलू उत्पाद (GDP) को अमरीकी डालर में लिया गया है।

तालिका-3
चुने हुए संवृद्धि संकेतक, 1980-94

देश	जी डी पी (यू.एस. डालर : बिलयिन)		जी.डी.पी. : औसत वार्षिक संवृद्धि दर (%)		प्रतिव्यक्ति आय डालर में
	1994	1980	1990-94	1980-90	1995
भारत	293.6	172.3	3.8	5.8	340
यू एस ए	6648.0	2708.1	2.5	3.0	26,980
जापान	4591.0	1059.2	1.2	4.1	39,640
जर्मनी	2046.0	819.1*	1.1	2.2	27,510
फ्रांस	1330.4	664.6	0.8	2.4	24,990
इटली	1024.6	452.6	0.7	2.4	19,020
यू के	1017.3	537.4	0.8	3.2	18,700
चीन	522.2	201.7	12.9	10.2	620
कोरिया गंणतंत्र	376.5	63.7	6.6	9.4	9,700
आस्ट्रेलिया	332.0	159.7	3.4	3.5	1,872
इंडोनेशिया	174.6	78.0	7.6	6.1	980
थाईलैंड	143.2	32.3	8.2	7.6	2,740
इजरायल	77.8	22.7	6.2	3.5	15,920
मलेशिया	70.6	24.5	8.4	5.2	3,890
सिंगापुर	68.9	11.7	8.3	6.4	26,730
फिलिपाइंस	64.2	32.5	1.6	1	1,050
पाकिस्तान	52.0	23.7	4.6	6.3	460
इजिप्ट	42.9	22.9	1.1	5	790
बांग्लादेश	26.2	12.9	4.2	4.3	240
श्रीलंका	11.7	4.0	5.4	4.2	700
किनिया	6.9	7.3	0.9	4.2	280

* यह जर्मनी के एकीकरण से पूर्व के फेडरल रिपब्लिक जर्मनी का है।

1995 में भारत की प्रतिव्यक्ति आय 340 डालर थी तालिका-3 विकसित देशों की तुलना में यह बहुत ही कम है। जापान की प्रतिव्यक्ति आय 39,640 डालर है जो सबसे अधिक है। अन्य विकसित देश हैं यू.एस. ए, यू.के, जर्मनी आदि। 1995 में भारत की प्रतिव्यक्ति आय पाकिस्तान से कम थी, हालाँकि ये दोनों देश एक

ही साथ आज़ाद हुए थे।

बोध प्रश्न 4

1) 1980-81 और 1990-91 के बीच प्रतिव्यक्ति आय में वृद्धि ..... प्रतिशत थी।

2) 1995 में भारत की प्रतिव्यक्ति आय ..... यू.एस. डालर थी, इसकी तुलना में जापान की प्रतिव्यक्ति आय ..... यू.एस. डालर थी।

2.6 आर्थिक संवृद्धि के कारक

आर्थिक संवृद्धि की प्रक्रिया का निर्धारण व्यापक रूप से दो प्रकार के कारकों से होता है : आर्थिक कारक और आर्थिकेतर कारक। आर्थिकेतर कारकों का वर्गीकरण सामाजिक और राजनैतिक कारकों के रूप में किया जा सकता है। ये कारक जब तक संवृद्धि में योगदान नहीं करेंगे तब तक आर्थिक संवृद्धि होना संभव नहीं है।

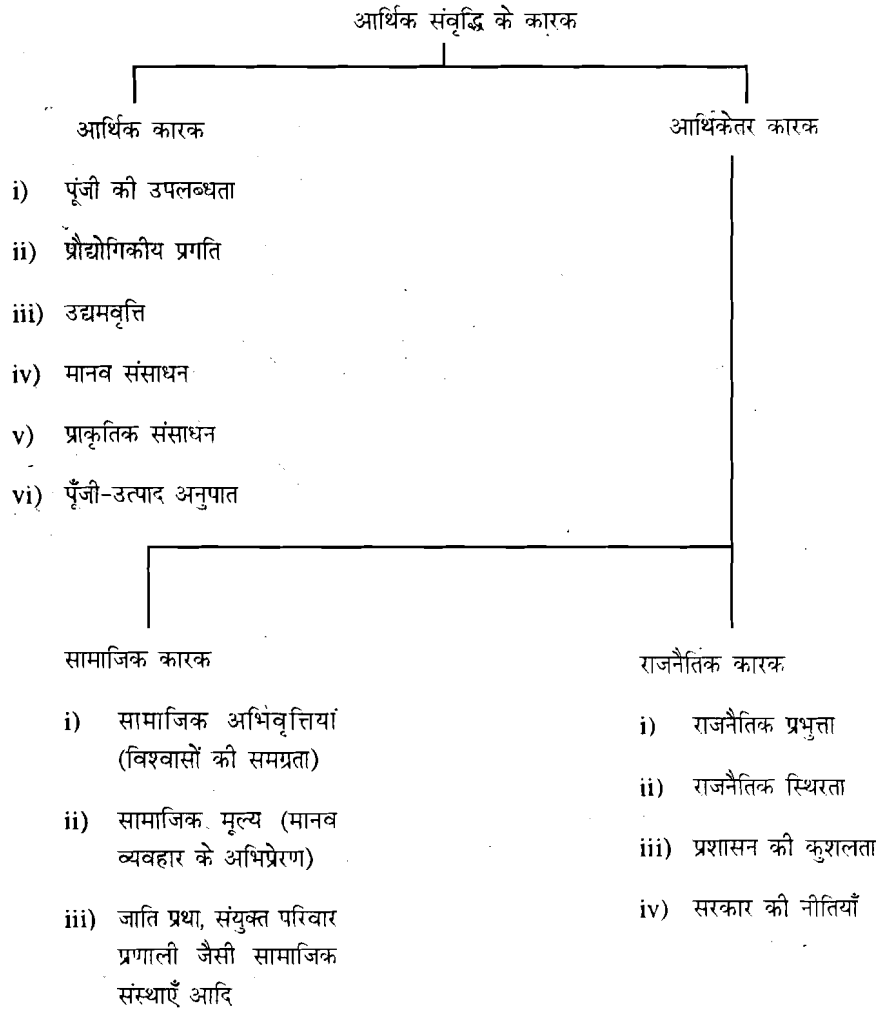

2.6.1 आर्थिक कारक

1950, 1960 और 1970 को दशकों में जिन कुछ प्रमुख आर्थिक कारकों के कारण भारत की आर्थिक संवृद्धि में बाधाएँ आई हैं उन्हें नीचे दिया जा रहा है:

i) **पूँजी की उपलब्धता :** भारत की अर्थव्यवस्था की संवृद्धि में प्रमुख अवरोध पर्याप्त मात्रा में पूँजी का उपलब्ध न होना रहा है। पर्याप्त मात्रा में पूँजी के उपलब्ध न होने की स्थिति में भारत पर्याप्त रूप में आर्थिक प्रगति नहीं कर सका। पूँजी का स्टॉक पर्याप्त मात्रा में न होने के साथ-साथ पूँजी निर्माण की दर भी अत्यंत कम थी।

iii) **प्रौद्योगिकीय प्रगति :** इस कारक का अर्थ है नवीन प्रक्रियाओं के फलस्वरूप उत्पादन की विधियों में परिवर्तन। इसके फलस्वरूप श्रम और पूँजी की उत्पादिता बढ़ती है। प्रौद्योगिकीय रूप में भारत की अर्थव्यवस्था पिछड़ी रही है जिसके कारण उत्पादिता सीमित रही है। 1991 में भारत द्वारा अपनाई गई विश्व-व्यापीकरण और उदारीकरण की नीति के फलस्वरूप आशा की जाती है कि विदेशी पूंजी का आगमन होगा एवं प्रौद्योगिकी में सुधार होगा जिसके फलस्वरूप और अधिक पूंजी उपलब्ध हो सकेगी।

iv) **उद्यमवृत्ति :** आर्थिक संवृद्धि के लिए गत्यात्मक उद्यमवृत्ति अनिवार्य कारक मानी जाती है, परंतु ऐसी उद्यमवृत्ति भारत में कम है। इसके मुख्य कारण निम्नलिखित हैं : (क) बाज़ार की अपूर्णता, (ख) संपत्ति अधिकारों की रक्षा का अभाव, (ग) वित्तीय संस्थाओं का अभाव, और (घ) प्रतिकूल सामाजिक एवं सांस्कृतिक वातावरण।

v) **मानव संसाधन :** भारत में मानव संसाधन अल्प विकसित है। अर्थव्यवस्था के सर्वांगीण विकास के लिए जिस कौशल और ज्ञान की आवश्यकता होती है उसका इस देश के लोगों में अभाव है। वे लोग देश की भौतिक पूँजी का उपयोग नहीं कर पा रहे हैं। इसके फलस्वरूप उत्पादन की मात्रा एवं गुणवत्ता में सुधार नहीं हो पा रहा है।

v) **प्राकृतिक संसाधन :** आर्थिक संवृद्धि की प्रक्रिया में प्राकृतिक संसाधनों की उपलब्धता का बहुत बड़ा योगदान होता है। किसी देश की आर्थिक संवृद्धि भूमि की उपलब्धता, मिट्टी की किस्म, वनों और खनिज संसाधनों पर निर्भर करती है। भारत में प्राकृतिक संसाधनों का बाहुल्य है। परंतु खेद की बात यह है कि इनका उचित उपयोग नहीं हो पा रहा है। आर्थिक और प्रौद्योगिकीय पिछड़ेपन के कारण अधिकतर प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग नहीं हो पा रहा है।

2.6.2 आर्थिकेतर कारक

आर्थिक कारकों के साथ-साथ आर्थिकेतर कारक भी आर्थिक संवृद्धि को प्रभावित करते हैं नीचे प्रमुख आर्थिकेतर कारकों के संबंध में विवेचन किया गया है:

i) **सामाजिक कारक :** सामाजिक अभिवृत्तियों, मूल्यों और संस्थाओं जैसे सामाजिक कारक आर्थिक समृद्धि को प्रभावित करते हैं। भारत के लिए ये कारक अनुकूल नहीं हैं। धार्मिक विश्वासों के चलते लोग कठिन परिश्रम नहीं कर पाते। लोग अपने परंपरागत रीति-रिवाज़ों को अधिक महत्व देते हैं। इसके अतिरिक्त जाति-प्रथा जैसी सामाजिक संस्थाओं ने व्यावसायिक गतिशीलता पर प्रतिबंध लगा दिया है। इसी प्रकार संयुक्त परिवार प्रणाली लोगों को स्वतंत्र आर्थिक निर्णय लेने से रोकती है। इन कारकों ने संवृद्धि की प्रक्रिया पर प्रतिकूल प्रभाव डाला है।

ii) **राजनैतिक कारक :** आर्थिक समृद्धि की प्रक्रिया में राजनैतिक कारकों की भी बहुत बड़ी भूमिका होती है। ब्रिटेन, जर्मनी, यू.एस.ए., जापान और फ्रांस में तेजी से आर्थिक संवृद्धि होने का मुख्य कारण यह है कि 19वीं सदी से ही इन देशों में राजनैतिक स्थिरता रही है तथा यहां का प्रशासन सशक्त रहा है।

2.6.3 हाल में नीति-परिवर्तन

भारत में प्रशासन और राजनैतिक ढांचे के कमजोर होने के कारण आर्थिक संवृद्धि के मार्ग में अनेक रुकावटें आई हैं। इसके अतिरिक्त सरकार की पहले की आर्थिक नीतियाँ आर्थिक विकास के लिए पर्याप्त नहीं थीं। 1950 के दशक, 1960 के दशक एवं 1970 के दशक में भारत में जो आर्थिक नीतियाँ अपनाई गईं वे मुख्यत: अंत:मुखी, सरंक्षणात्मक एवं केंद्र द्वारा निर्देशित थी। इन नीतियों से भारत को योजनाबद्ध विकास में सीमित मात्रा में ही सहायता मिली। विकास की क्षमता का पूरा-पूरा उपयोग नहीं किया जा सका। नीति में परिवर्तन करना अत्यंत आवश्यक था। इसीलिए 1980 के दशक के शुरू के वर्षों में भारत में अर्थव्यवस्था के विनियमन का कार्य प्रारंभ हुआ। 1991 में इस नीति परिवर्तन की गति को और तेज़ किया गया, जब नई उद्योग नीति अपनाई गई। आशा की जाती है कि भारत की इस नई आर्थिक नीति के फलस्वरूप देश के औद्योगीकरण और आर्थिक संवृद्धि को बहुत अधिक बल मिलेगा। 1995-96 में सकल देशीय उत्पाद (GDP) में 7 प्रतिशत से अधिक वृद्धि हुई। बचत और पूँजी-निर्माण की दरों में भी वृद्धि हुई है। पूँजी का अंत: प्रवाह भी बहुत अधिक बढ़ा है।

बोध प्रश्न 5

1) आर्थिक संवृद्धि के आर्थिक कारकों का विवेचन कीजिए।

.....

.....

.....

.....

2) 1991 में शुरू की गई विश्व-व्यापीकरण की नीति से भारत में पूंजी-निर्माण की दर को बढ़ाने में किस प्रकार से सहायता मिलेगी?

.....

.....

.....

.....

3) भारत में आर्थिक संवृद्धि को बढ़ाने के लिए हाल में जो नीति परिवर्तन किए गए हैं, उन पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

.....

.....

.....

.....

2.7 संरचनात्मक परिवर्तन

2.7.1 संरचनात्मक परिवर्तन का अर्थ

संरचनात्मक परिवर्तन से अभिप्राय होता है अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रकों के सापेक्ष महत्व में परिवर्तन। संरचनात्मक परिवर्तन तब होता है, जब देश के राष्ट्रीय उत्पाद में प्राथमिक, द्वितीयक और तृतीयक जैसे विभिन्न क्षेत्रकों के अंशदान में परिवर्तन होता है। इस प्रकार संरचनात्मक परिवर्तन से अभिप्राय होता है उत्पादन की सरंचना में परिवर्तन।

राष्ट्रीय उत्पाद के प्राक्कलन के लिए सी.एस.ओ. ने भारतीय अर्थव्यवस्था को निम्नलिखित प्रमुख क्षेत्रकों में बाँटा है :

प्राथमिक क्षेत्रक में कृषि, वानिकी, मछली पकड़ना, खनन, उत्खनन आदि जैसे आर्थिक कार्य-कलाप आते हैं।

द्वितीयक क्षेत्रक में विनिर्माण, निमार्ण, बिजली, गैस, जलपूर्ति आदि जैसे कार्य-कलाप आते हैं।

तृतीयक क्षेत्रक में जो कार्य-कलाप आते हैं वे हैं : (i) व्यापार, परिवहन और संचार (ii) बैंकिंग, बीमा, स्थावर संपत्ति और व्यवसाय, (iii) लोक प्रशासन और अन्य सेवाएँ, और (iv) विदेश व्यापार।

विकास का काम जैसे-जैसे आगे बढ़ता है, वैसे-वैसे देश के राष्ट्रीय उत्पाद में इन क्षेत्रकों के प्रतिशत अंशदान में परिवर्तन होता जाता है। इस प्रकार आर्थिक संवृद्धि की दर में जैसे-जैसे वृद्धि होती जाती है, वैसे-वैसे कृषि और प्राथमिक क्षेत्रक का अंशदान घटता जाता है। अल्पविकसित देशों में कृषि और प्राथमिक क्षेत्रक का महत्व अपेक्षाकृत अधिक होता है। आगे दी गई तालिका-4 में पिछले पांच दशकों में भारत के राष्ट्रीय उत्पाद में विभिन्न क्षेत्रकों के प्रतिशत अंशदान को दिखाया गया है।

तालिका-4
सकल घरेलू उत्पाद (जी डी पी) में विभिन्न क्षेत्रकों के अंश

(1980-81 की कीमतों पर)

(प्रतिशत में)

क्षेत्रक	1950-51	1970-71	1980-81	1990-91	1999-00*
1. प्राथमिक क्षेत्रक	55.3	44.5	38.1	31.6	27.5
2. द्वितीयक क्षेत्रक	16.1	23.6	25.9	28.7	24.7
3. तृतीयक क्षेत्रक	28.5	31.9	36.0	39.6	47.8
I. वस्तु क्षेत्रक (1+2)	71.4	68.1	64.0	60.4	52.2
II. सेवा क्षेत्रक	28.5	31.9	36.0	39.6	47.8

स्रोत : नेशनल एकाउंटस स्टैटिस्टिक्स

* नोट : 1993-94 की कीमतों पर

प्राथमिक क्षेत्रक (कृषि, वानिकी, मछली पकड़ना और खनन) : 1950-51 में राष्ट्रीय उत्पाद में इन कार्यकलापों का सबसे बड़ा अंश था। परंतु समय गुजरने के साथ.साथ इनका प्रतिशत कम हो गया है। 1999-00 तक इनका अंश घटकर 27 प्रतिशत हो गया। प्राथमिक क्षेत्रक में सबसे बड़ा अंश कृषि का होता है। कृषि के सापेक्ष महत्त्व का घट जाना आर्थिक संवृद्धि का द्योतक होता है। हम यह भी देखते हैं कि संवृद्धि दर में वृद्धि के फलस्वरूप पिछले 15 वर्षों में कृषि के अंश में बहुत अधिक गिरावट आई है।

द्वितीयक क्षेत्रक (विनिर्माण, निर्माण, बिजली) : भारत के कुल राष्ट्रीय उत्पाद में द्वितीयक क्षेत्रक का अंशदान लगभग 30 प्रतिशत है। 1950-51 में यह अंश 16 प्रतिशत था। समय गुजरने के साथ-साथ 1999-00 तक यह अंश बढ़कर लगभग 25 प्रतिशत से अधिक हो गया। इन कार्य-कलापों में विनिर्माण का स्थान प्रमुख है।

तृतीयक क्षेत्रक : 1950-51 में इस क्षेत्रक का अंश लगभग 28 प्रतिशत था। समय गुजरने के साथ-साथ 1999-00 तक बढ़कर यह 48 प्रतिशत हो गया।

2.7.2 वस्तु बनाम सेवा क्षेत्रक

राष्ट्रीय उत्पाद के संघटन के संबंध में विचार करने की दूसरी विधि है - वस्तु बनाम सेवा क्षेत्रक। प्राथमिक क्षेत्रक और द्वितीयक क्षेत्रकों को मिलाकर उत्पादन वस्तु क्षेत्रक बनता है जबकि तृतीयक क्षेत्रक को सेवा क्षेत्रक भी कहा जाता है।

विकास की प्रक्रिया में प्राथमिक क्षेत्रक में जैसे-जैसे कृषि का अंश घटता जाता है, वैसे-वैसे स्वयं वस्तु क्षेत्रक का अंश भी कम होता जाता है और इसके फलस्वरूप सेवा क्षेत्रक का अंश बढ़ता जाता है। 1950-51 में भारत में वस्तु क्षेत्रक का अंश 70 प्रतिशत से अधिक था। 1995-96 तक यह अंश घटकर 52 प्रतिशत हो गया (तालिका-4 देखिए)। इसके फलस्वरूप सेवा क्षेत्रक का अंश 1950-51 के 28 प्रतिशत से बढ़ कर 1999-00 तक 48 प्रतिशत हो गया।

2.7.3 प्रमुख क्षेत्रकों में संरचनात्मक परिवर्तन

जैसा कि ऊपर विवेचन किया गया है अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रकों के बीच परस्पर संरचनात्मक परिवर्तन हुए हैं, परंतु इसके अतिरिक्त इन क्षेत्रकों के अंदर भी प्रमुख संरचनात्मक परिवर्तन हुए हैं। उनके संबंध में नीचे विवेचन किया जा रहा है।

कृषि क्षेत्रक में परिवर्तन : आज़ादी के समय से भारत की कृषि में बहुत अधिक परिवर्तन हुए हैं। निर्वाह कृषि (subsistence farming) का स्थान वाणिज्यिक कृषि ने ले लिया। किसान लोग पहले अपने उपभोग के लिए ही खेती करते थे परंतु अब वे बाज़ार के लिए उत्पादन करते हैं। खाद्य फसलों की तुलना में कपास, जूट आदि जैसी नकदी फसलों का महत्व बढ़ गया है। खेती की पुरानी और परम्परागत विधियों का स्थान अब नई और आधुनिक विधियों ने ले लिया है और इस प्रकार हरित क्रांति को लाना संभव हो सका है।

उद्योग क्षेत्रक में परिवर्तन : योजना की अवधि में उद्योग क्षेत्रक में भी अनेक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं। आज़ादी के बाद से इस्पात, मशीनरी, रसायन, उर्वरक, पेट्रोलियम आदि अनेक महत्त्वपूर्ण बुनियादी उद्योगों की स्थापना हुई। इसके अतिरिक्त रेफ्रिजरेटर, टी.वी. सेट, स्कूटर, एयर कंडिशनर, मोटर गाड़ी आदि जैसी टिकाऊ उपभोक्ता वस्तुओं का उत्पादन देश के अंदर ही होने लगा है। लघु उद्योगों का भी आधुनिकीकरण किया जा रहा है।

सेवा क्षेत्रक में परिवर्तन : भारत में सेवा क्षेत्रक में भी महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं। उदाहरणार्थ परिवहन, बैंकिंग, विद्युत, संचार, सिंचाई आदि में बड़े पैमाने पर विस्तार हुआ है। बहु-उद्देशीय नदी घाटी योजनाओं का जाल देश भर में फैला हुआ है। बैंकिंग का भी ग्रामीकरण किया गया है। रेलवे, एयरवेज़, रोड, शिपिंग आदि जैसे परिवहन के साधनों में बहुत अधिक विकास हुआ है। इनका आधुनिकीकरण भी हुआ है। विदेश व्यापार के संघटन में मूल रूप में परिवर्तन हुए हैं। अब भारत से विनिर्मित वस्तुओं का निर्यात बहुत बड़ी मात्रा में होता है। आयात तो अब मुख्यत: पूँजीगत पदार्थों और कच्चे माल का ही होता है।

2.7.4 सकल घरेलू उत्पाद (जी.डी.पी.) के अन्य संघटक

राष्ट्रीय आय के क्षेत्रक वितरण में जो संरचनात्मक परिवर्तन हुए हैं, वे आर्थिक संवृद्धि की उस प्रक्रिया के परिणाम हैं जिसकी शुरुआत भारत की पंचवर्षीय योजनाओं की अवधि में की गई। भारतीय अर्थव्यवस्था में संवृद्धि के साथ-साथ अन्य क्षेत्रकों के अंशदान में भी परिवर्तन हुए हैं। उदाहरणार्थ, संगठित क्षेत्रक (अर्थात् वे सभी उद्यम जो पंजीकृत हैं या वार्षिक लेखा रखते हैं) का सापेक्ष अंशदान 1950-51 से 1995-96 के दौरान 25.6 प्रतिशत से बढ़कर 36.1 प्रतिशत हो गया। उसी प्रकार, राष्ट्रीय आय में सार्वजनिक क्षेत्र और निजी क्षेत्र के अंशदान में भी परिवर्तन हुए हैं। उदाहरणार्थ, 1960-61 में जी डी पी में सार्वजनिक क्षेत्र का योगदान 10.7 प्रतिशत था जो 1999-00 तक बढ़कर 25.0 प्रतिशत हो गया। इसी अवधि में निजी क्षेत्र का योगदान 89.3 प्रतिशत से घटकर 74.0 प्रतिशत हो गया (1991-92 के आँकड़ों के अनुसार)।

2.7.5 क्षेत्रकों में रोज़गार

अर्थव्यवस्था में जब विकास होता है। तब अनेक प्रकार के रोज़गार के अवसर मिलते हैं। लोग गाँवों को छोड़कर शहरों में इस आशा से आने लगते हैं कि अर्थव्यवस्था के द्वितीयक और तृतीयक क्षेत्रकों में उन्हें रोज़गार मिलेगा। नीचे के विवरण में दिखाया गया है कि भारत की अर्थव्यवस्था की व्यावसायिक संरचना में क्या परिवर्तन हुए हैं।

तालिका - 5

कार्यशील जनसंख्या का व्यावसायिक वितरण

(प्रतिशत में)

क्षेत्रक	1951	1961	1971	1981	1991
प्राथमिक	72.1	72.3	72.0	69.0	65.5
द्वितीयक	10.6	11.7	11.2	12.0	14.5
तृतीयक	17.3	16.6	16.8	19.0	20.0

स्रोत : 'सेंसज आफ इंडिया' (भारतीय आंकड़े), भारत सरकार, 1994-95

ऊपर के विवरण से स्पष्ट है कि 1951-71 की अवधि में भारत की अर्थव्यवस्था में कोई बहुत बड़ा संरचनात्मक परिवर्तन नहीं हुआ। जनसंख्या का व्यावसायिक वितरण लगभग ज्यों का त्यों बना रहा। 1981 में जाकर कुछ वांछित परिवर्तन देखने में आए। प्राथमिक क्षेत्रक में काम करने वाली जनसंख्या घटकर 69 प्रतिशत हो गई तथा द्वितीयक और तृतीयक क्षेत्रकों में काम करने वाली जनसंख्या बढ़कर क्रमश: 12 प्रतिशत और 19 प्रतिशत हो गई। 1991 की जनगणना के आंकड़ों के अनुसार इस प्रवृत्ति को और बल मिला। इस जनगणना के अनुसार कार्यशील जनसंख्या का 65.5 प्रतिशत प्राथमिक क्षेत्रक में, 14.5 प्रतिशत द्वितीयक क्षेत्रक में और शेष 20 प्रतिशत सेवा क्षेत्रक में कार्य कर रहा था। यह संरचनात्मक परिवर्तन आर्थिक प्रगति का द्योतक है।

2.7.6 अंतर्राष्ट्रीय तुलनाएँ

इस पाठ के प्रारंभ में ही हमने स्पष्ट किया है कि अर्थव्यवस्था जैसे-जैसे विकास के उच्चतर स्थिति की ओर जाती है, वैसे-वैसे कृषि क्षेत्रक का योगदान कम होता जाता है तथा सेवा क्षेत्रक का अंश बढ़ता जाता है। अनेक देशों के जी डी पी के संघटन में तुलना के द्वारा इसे और स्पष्ट रूप से दिखाया जा सकता है। इस संबंध में आंकड़े तालिका-6 में दिए गए हैं। तालिका में देशों को उनके विकास स्तर के लगभग आरोही क्रम से दिखाया गया है।

इसमें भारत का स्थान सबसे ऊपर है जहाँ जी डी पी का 30 प्रतिशत कृषि से आता है। इस तालिका में जैसे-जैसे हम नीचे जाते हैं विकास का स्तर जैसे-जैसे बढ़ता जाता है और कृषि का अंश घटता जाता है। फ्रांस, यू.एस.ए., इंग्लैंड, जर्मनी आदि जैसे अत्यधिक विकसित देशों के जी डी पी में कृषि का अंश 2 से 3 प्रतिशत ही है।

इसके विपरीत सेवाओं का अंश बढ़ता जाता है। विकसित देशों में यह 60-70 प्रतिशत है। फ्रांस में यह सबसे अधिक अर्थात् 70 प्रतिशत है। समय बितने के साथ-साथ भारत में यद्यपि यह प्रतिशत बढ़ा है यानी 42 प्रतिशत है फिर भी यह तालिका में दिए गए देशों की तुलना में सबसे कम है।

अर्थव्यवस्था के विकास स्तर के बढ़ने के साथ-साथ विनिर्माण के प्रतिशत में पहले वृद्धि होती है। लेकिन एक स्तर के बाद यह 30-35 प्रतिशत पर स्थिर हो जाती है। तालिका में हम देखते हैं कि जी डी पी में उद्योग का सबसे ऊँचा स्तर चीन में है। भारत में जी डी पी में उद्योग का स्तर 28 प्रतिशत है, जो बंग्लादेश, कीनिया, पाकिस्तान और कुछ अन्य देशों से अधिक है।

तालिका-6
उत्पादन संरचना, 1994 की अंतर्राष्ट्रीय तुलनाएँ

	सकल देशीय उत्पाद का वितरण (प्रतिशत)			
	कृषि	उद्योग	सेवाएँ	कुल
भारत	30	28	42	100
बांग्लादेश	30	18	52	100
कीनिया	39	17	54	100
पाकिस्तान	35	25	50	100
श्रीलंका	24	25	51	100
फिलिपिन्स	22	33	45	100
चीन	21	47	32	100
इजिप्ट	20	21	59	100
इंडोनेशिया	17	41	42	100
ब्राजिल	13	39	49	100
थाईलैंड	10	39	50	100
मेक्सिको	8	28	64	100
रूस	7	38	55	100
कोरिया गणतंत्र	7	43	50	100
दक्षिण अफ्रीका	5	31	65	100
इटली	3	31	66	100
आस्ट्रेलिया	3	30	67	100
फ्रांस	2	28	70	100
जापान	2	40	58	100
स्वीडन	2	30	68	100
यू के	2	32	66	100
यू एस ए	2	29	69	100
जर्मनी	2	38	61	100
सिंगापुर	1	36	64	100

स्रोत : वर्ल्ड डिवलपमेंट रिपोर्ट, 1999.

नोट : कृषि के अंतर्गत वानिकी, शिकार और मछली पकड़ना आता है। उद्योग के अंतर्गत खनन, विनिर्माण, निर्माण, विद्युत, जल और गैस आते हैं। बैंकिंग सेवा प्रभार, आयात शुल्क आदि सहित आर्थिक कार्य-कलापों की अन्य शाखाओं में वर्धित मूल्य को सेवा की श्रेणी में रखा जाता है।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि योजना की अवधि में राष्ट्रीय उत्पाद में अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रकों के सापेक्ष अंश में बहुत परिवर्तन हुए हैं। ये परिवर्तन इस बात के द्योतक हैं कि भारत आर्थिक पिछड़ेपन की जंजीरों से मुक्त हो रहा है। फिर भी अभी यह अल्पविकसित अर्थव्यवस्था है। ऐसा इसलिए है कि अमरीका, इंग्लैंड, जर्मनी आदि जैसे विकसित देशों की तुलना में भारत के राष्ट्रीय उत्पाद में कृषि का अंशदान बहुत अधिक है।

बोध प्रश्न 6

1) किसी अर्थव्यवस्था में संरचनात्मक परिवर्तनों से आप क्या समझते हैं?

.....

.....

.....

.....

2) (i) प्राथमिक क्षेत्रक, (ii) द्वितीयक क्षेत्रक, और (iii) तृतीयक क्षेत्रक शब्दों की परिभाषा दीजिए।

.....

.....

.....

.....

3) वस्तु क्षेत्रक और सेवा क्षेत्रक में अंतर बताइए।

.....

.....

.....

.....

4) भारत में, 1991 में भी, कुल श्रमशक्ति का ..... प्रतिशत प्राथमिक क्षेत्रक में काम करता था।

.....

.....

.....

.....

5) 1994 में कुल जी डी पी का ..... प्रतिशत कृषि क्षेत्रक से था, जिसकी तुलना में यू.एस.ए. में ..... प्रतिशत तथा चीन में ..... प्रतिशत था।

2.8 सारांश

इस इकाई में हमने भारत में पिछले 50 वर्षों से आए आर्थिक संवृद्धि और संरचनात्मक परिवर्तनों के बारे में पढ़ा है। स्वतंत्रता के समय भारत में एक पिछड़ा हुआ कृषि क्षेत्रक और अल्पविकसित औद्योगिक क्षेत्रक था। जन्म और मृत्यु दर काफी ऊँचे थे और औद्योगिक क्रियाओं का स्तर काफी निम्न था। गरीबी से छुटकारा पाने

के लिए कृषि और उद्योगों का विकास करना प्राथमिकता थी जिससे प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि हो। कृषि व औद्योगिक विकास के लिए जरूरी था कि यातायात, बैंकिंग और व्यापार जैसी आधारिक संरचना (Infrastructure) का विकास किया जाए।

संवृद्धि दर चाहे वो राष्ट्रीय उत्पाद और प्रति व्यक्ति आय में हो, एक मात्रात्मक शब्द (Quantitative term) है। आर्थिक विकास एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा एक अर्थव्यवस्था निम्न स्तर की आर्थिक गतिविधि (Activity) से ऊपर उठती है। विकास संवृद्धि से ज्यादा term है।

दूसरे शब्दों में संवृद्धि को विकास का एक उपभाग (subset) कहा जाता है। आर्थिक विकास की प्रक्रिया दो तरह के कारकों से निर्धारित की जाती है। आर्थिक कारक व आर्थिकेतर कारक। आर्थिकेतर कारकों को आगे सामाजिक व राजनैतिक कारकों में विभाजित किया जा सकता है। आर्थिक विकास इन कारकों के विकास के बिना संभव नहीं है। 50, 60 व 70 के दशकों में भारत की आर्थिक नीतियाँ अंतर्मुखी (inward looking) थी। 80 के दशक में भारत में अर्थव्यवस्था को नियंत्रण मुक्त (deregulate) करना शुरू किया। 1991 में नई औद्योगिक नीति को अपनाने के साथ ही इन नीतियों तथा परिवर्तनों में तेजी आई है। संरचनात्मक परिवर्तन, उत्पादन के ढांचे में परिवर्तन के बारे में संकेत करते हैं।

2.9 शब्दावली

आर्थिक संवृद्धि (Economic Growth) : वह प्रक्रिया जिसके द्वारा दीर्घकाल में वास्तविक राष्ट्रीय आय और प्रतिव्यक्ति आय में वृद्धि होती रहती है।

राष्ट्रीय आय (National Income) : वर्तमान बाज़ार कीमतों पर किसी अर्थव्यवस्था में उत्पादित वस्तुओं और सेवाओं का कुल अंतिम उत्पाद।

प्रतिव्यक्ति आय (Per Capita Income) : किसी देश के लोगों की औसत वार्षिक आय।

संरचनात्मक परिवर्तन (Structural Change) : किसी अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रकों के सापेक्ष महत्व में परिवर्तन होना।

प्राथमिक क्षेत्रक (Primary Sector) : कृषि, वानिकी, मछली पकड़ना आदि से संबंधित आर्थिक कार्य-कलाप इसके अंतर्गत आते हैं।

द्वितीयक क्षेत्रक (Secondary Sector) : इसके अंतर्गत विनिर्माण, निर्माण, विद्युत, गैस और जलपूर्ति से संबंधित कार्य आते हैं। इस क्षेत्रक में विनिर्मित वस्तुओं का उत्पादन होता है।

तृतीयक क्षेत्रक (Tertiary Sector) : यह क्षेत्रक अर्थव्यवस्था के प्राथमिक और द्वितीयक क्षेत्रकों को उपयोगी सेवाएँ, प्रदान करता है। इसके अंतर्गत परिवहन, संचार, बैंकिंग, बीमा, भंडारण, व्यापार, लोक प्रशासन आदि सेवाएँ आती हैं।

वस्तु क्षेत्रक (Commodity Sector) : वह क्षेत्रक जिसमें भौतिक वस्तुओं का उत्पादन होता है। यह किसी अर्थव्यवस्था के कृषि और उद्योग क्षेत्रकों का योग होता है।

गैर-वस्तु क्षेत्रक (Non-Commodity Sector) : किसी अर्थव्यवस्था का तृतीयक क्षेत्रक जिसमें वस्तुओं के स्थान पर सेवाओं का उत्पादन होता है।

संगठित क्षेत्रक (Organised Sector) : इसके अंतर्गत वे सभी इकाइयां आ जाती है जो अपने आर्थिक कार्य-कलापों के नियमित लेखा रखती हैं।

असंगठित क्षेत्रक (Unorganised Sector) : इसके अंतर्गत वे सभी इकाइयां आ जाती हैं जो अपने आर्थिक कार्यकलापों का कोई लेखा नहीं रखतीं।

व्यावसायिक संरचना (Occupational Structure) : कृषि, उद्योग और सेवा जैसे विभिन्न व्यवसायों में कार्यशील जनसंख्या का वितरण।

पूंजी (Capital) : मानव-निर्मित उत्पादन के साधन। यह वस्तुओं और सेवाओं के उत्पादन में सहायक है तथा भविष्य में आय-सृजन को प्रोत्साहित करता है।

2.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें

Government of India, Ministry of Finance, Economic Survey, 1996-97.

World Bank, 1997: *World Development Report.*

Central Statical Organisation (1999): *National Accounts Statistics.*

Kuznets, Simon (1959): *Six Lectures on Economic Growth* (Lecture 1), The Free Press of Glencoe.

Kindleberger, Charles, P. (1965): *Economic Development,* chapters 1 & 2; McGraw-Hill Book Company, New York.

Meier, Gerald, M. and Robert E. Baldwin, (1957): *Economic Development,* pp. 1-16, John Wiley & Sons, London.

2.11 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा दिशा संकेत

बोध प्रश्न 1

1) 240 रु. उस समय की प्रचलित कीमतों पर

2) चिकित्सीय सुविधाओं का अभाव, घोर गरीबी के कारण पोषाहार भोजन का निम्न स्तर।

3) शक्तियों का ऐसा नक्षत्रीय प्रवाह जिसके अंतर्गत वे एक-दूसरे के प्रति इस प्रकार क्रिया एवं प्रतिक्रिया करती हैं जिससे एक निर्धन देश गरीबी की अवस्था में बना रहता है।

4) मज़बूत आधारभूत संरचना का आधार जैसे ऊर्जा, परिवहन और संचार, वित्त, बीमा सिंचाई की सुविधाएँ इत्यादि।

बोध प्रश्न 2

1) उप-भाग 2.2.1 एवं 2.2.2 देखें।

2) आर्थिक वृद्धि का अभिप्राय वास्तविक सकल घरेलू उत्पाद में वृद्धि से है जबकि आर्थिक विकास परिवर्तन के साथ वृद्धि को बताता है। इस प्रकार आर्थिक विकास एक वृहद् अवधारणा है क्योंकि इसमें अर्थव्यवस्था में हुए मात्रात्मक एवं गुणात्मक दोनों ही प्रकार के परिवर्तन शामिल होते हैं।

3) एक अर्थव्यवस्था का विकास एक ऐसी प्रक्रिया को बताता है जिसके द्वारा एक लम्बे समय में देश की वास्तविक प्रतिव्यक्ति आय में वृद्धि होती है। इसके साथ ही गरीबी रेखा से नीचे रहने वाली व्यक्तियों की संख्या में कमी होनी चाहिए तथा आय के वितरण में समानता भी होनी चाहिए। इसके साथ ही लोगों की सामाजिक एवं आर्थिक स्थितियों में सुधार भी होना चाहिए। विकास सतत भी होना चाहिए, जिसका अभिप्राय है वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं को भावी पीढ़ियों की आवश्यकताओं से समझोता किए बिना पूरा करना।

बोध प्रश्न 3

1) आर्थिक वृद्धि को मापने के चार तरीके हैं (i) वास्तविक राष्ट्रीय आय में वृद्धि; (ii) प्रतिव्यक्ति आय में वृद्धि; (iii) उपभोग में वृद्धि; (iv) सामाजिक संकेतकों जैसे स्वास्थ्य, भोजन, पोषाहार, शिक्षा, रोज़गार, आवास, वस्त्र, परिवहन, सामाजिक सुरक्षा इत्यादि में सुधार।

2) उप-भाग 2.3.1 देखें।

बोध प्रश्न 4

1) 1980-81 से 1990-91 के दौरान प्रतिव्यक्ति आय में वृद्धि दर 3.1 प्रतिशत थी।

2) 1995 में भारत की प्रतिव्यक्ति आय 340 अमेरिकी डालर और जापान की प्रतिव्यक्ति आय 39,640 अमेरिकी डालर थी।

बोध प्रश्न 5

1) वृद्धि के लिए उत्तरदायी आर्थिक कारक इस प्रकार हैं :

   (1) पूँजी की उपलब्धता (2) तकनीकी प्रगति (3) उपक्रमता

   (4) मानवीय संसाधन (5) प्राकृतिक संसाधन (6) पूँजी तथा पूँजी-उत्पादन अनुपात

2) वैश्वीकरण की नीति, विकास की बहिर्मुखी रणनीति है। इसमें वस्तुओं, सेवाओं, पूँजी, तकनीकी तथा श्रम का बिना किसी नियंत्रण के आवागमन शामिल होता है। विदेशी विनियोग तथा पूँजी के आने के साथ ही बचत तथा पूँजी निर्माण में वृद्धि की प्रत्याशा रहती है।

3) अर्थव्यवस्था में हाल ही में हुए नीतिगत परिवर्तन जुलाई 1991 में औद्योगिक नीति की घोषणा के साथ ही शुरू हुए। इसके साथ ही अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों जैसे व्यापार, वित्त, बीमा बैंकिंग, कर दरों इत्यादि में महत्त्वपूर्ण नीतिगत परिवर्तन भी किए गए हैं।

बोध प्रश्न 6

1) ढाँचागत परिवर्तन अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों में किए गए अपेक्षाकृत महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हैं। ढाँचागत परिवर्तन तब होते हैं जबकि विभिन्न क्षेत्रों जैसे प्राथमिक क्षेत्र, विनिर्माण क्षेत्र तथा सेवा क्षेत्र का राष्ट्रीय उत्पाद, में आनुपातिक भाग बदलता है। इस प्रकार ढाँचागत परिवर्तन उत्पादन के ढाँचे में हुए परिवर्तन को व्यक्त करता है।

2) उप-भाग 2.6.1 देखें और उत्तर दें।

3) उप-भाग 2.6.2 को देखें और उत्तर दें।

4) 1991 में प्राथमिक क्षेत्र में कुल कार्यशील जनसंख्या का 65.5 प्रतिशत लगा हुआ था।

5) 1974 में भारत में सकल घरेलू उत्पाद का 30 प्रतिशत भाग कृषि से आता था जबकि संयुक्त राज अमेरिका में तथा चीन में यह प्रतिशत क्रमशः 2 से 3 प्रतिशत तथा 21 प्रतिशत था।